19वीं शताब्दी में मिथिला की सामाजिक स्थिति

डॉ॰ डैजी कुमारी

एम० ए०, पीएच० डी०,
विश्वविद्यालय इतिहास विभाग,
बी० आर० ए० बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।

सीरध्वज जनक, याज्ञवल्क्य, कपिल, कणाद, मंडल, गोकूल वाचस्पति, विधापत्ति की भूमि मिथिला अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक और बौद्धिक पहचान के लिए भारत में ही नहीं अपितु विश्व में अपना विशिष्ट पहचान रखती है।[1] मिथिला में केवल शील स्वरूपाा सीतातत्व की पर्याय जगत जननी का ही प्रादुभाव नहीं हुआ वरन राम तत्व के अदभुत विराट स्वरूप का साक्षात्कार भी यही हुआ है। ''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरायमा'' उपनिषद वाक्य मिथिला ने ही उतारा है।[2]

मिथिला भारतीय इतिहास के प्राचीनतम राज्यों में एक है। इसका अतीत काफी गौरवशाली है। प्राचीन मैथिल तथा इसके शासकगण जिस प्रकार अपने विधाप्रेम के लिए प्रख्यात थे उसी प्रकार वीरता एवं साहस के लिए भी प्रशंसनीय थे। जिस प्रकार वे सांसारिक निधि अधिकारों के धनी थे उसी प्रकार मानसिक एवं आध्यात्मिक स्थायी निधि के अधिकारी थे। उनकी न्याय व्यवस्था भी श्रेष्ठ थी। मिथिला का समाज पुरूष प्रधान समाज था। संयुक्त परिवार की परम्परा थी। संयुक्त परिवार में संयुक्त संपत्ति का ही अस्तित्व होने और संपत्ति से प्राप्त सभी प्रकार के भौतिक आनंदों में समान हिस्सा होने के कारण संयुक्त परिवार के सदस्य आर्थिक प्रतियोगिता के निराशानजक प्रभाव से मुक्त रहते थे। संयुक्त परिवार की अच्छाई को मिथिलावासी गहराई से समझते थे।

उस समय समाज के लोगों के मुख्यतः तीन वर्ग था। उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग एवं निम्न वर्ग। उच्च वर्ग में सुविधा संपन्न लोग आते थे, जबकि निम्न वर्ग में गरीब किसान, श्रमिक, दास आदि आते थे। इन वर्गो की विभिन्न जातियां थी। मिथिला के निवासी कट्टर जातिपंथी वाले थे। साधारणतः हिन्दू, मुसलमान, इसाई, यहूदी आदि। विधर्मी तथा इंग्लैंड के वाशिंदों के साथ बैठकर उनका छुआ भोजन नहीं करते थे। ऐसा करने पर वो खुद को धर्मच्च्युत होना मानते थे। उच्च वर्ग के लोग निम्न वर्ग के लोगों द्वारा निर्मित भोजन नहीं करते थे। लेकिन धानुक, कुर्मी, बनिया, कानू, कहार, माल, ग्वाला, आदि के घर का भुना हुआ चना, चावल खाने में उनका विरोध नहीं था। शुद्रों द्वारा घी में पकाई गयी वस्तु को भी ग्रहण करने में उनको कोई परहेज नहीं था। किसी व्यक्ति द्वारा चोरी, जाल फरेब, झुठ जैसे घृणित कार्यो के करने से भी हिन्दुओं का जाति से च्युत होना पड़ता था, किन्तु यदि वे समुद्र पार कर लेते तो उन्हें अपनी बिरादरी से त्याग दिया जाता था।[3]

मिथिला के लोगों के भोजन में अनाज, फल, शाक–सब्जी के अलावा माँस–मछली का भी प्रयो होता था। मिथिला में ब्राह्मण लोग भी मछली खाते थे तथा देवी की बलि में चढ़ाये गये माँस को भी खाते थे। वह मांस बकरे का होताा था। समाज के सभी वर्गो में माँस, मछली खाने का प्रचलन था। निम्न जाति के लोग भैंस और सुअर का मांस भी खाते थे। जमीन के नीचे उपजने वाली वस्तुओं में प्याज एवं लहसुन का खाना ब्राह्मणों के लिए निषेध था।[4]

विवाह संबंध अपनी ही जातियों में करने की परिपाटी थी। ब्राह्मणों, क्षत्रीय, वैश्य एवं शुद्र चार जातियों की अनेक उप जातियाँ थी। ब्राह्मण वर्ग के लोग अपने को सर्वश्रेष्ठ मानते थे। ब्राह्मणों की भी मुख्यतः श्रेणियाँ थी –(1) दान ग्रहण करने वाले का और दूसरा (2) दान देने वालों का। प्राचीन काल में

भी हम दो प्रकार के ब्राह्मण को पाते है। एक प्रवृति मार्गी और दूसरा निवृति मार्गी। इक्ष्वाकु के दान स्वीकार करने की प्रार्थना करने पर दान त्यागी वर्ग के एक तपस्वी विद्वान ब्राह्मण ने उनके उस अनुनय को अस्वीकार करते हुए निम्नांकित उत्तर दिया था।

''द्विविधा ब्राहाणः राजन धर्मश्य द्विविधः स्मृतः प्रवृताराय निवृताश्च निवृतोअहं प्रतियांहतो।[5]

प्रारंभ में विन्ध्यपर्वत के उत्तर में निवास करने वाले ब्राह्मणों का स्कन्दपुराण के सत्रहवें अध्याय में निम्न वर्णन आया है। यथा–

''सारस्वताः कान्यकृस्जा गौडारच मैथिलोत्कलाः गौड़ाः पत्र समाख्याता विन्ध्यस्योतशांसिनः।

आगे चलकर उपरोक्त पाँच विभागों में से एक–एक के कई उपविभाग हो गये।

सूर्यपारी सनाठ्याक्षय भूमिहारो जिझौतियाः प्रकृतश्च कान्यकुस्जाना भदो पञ्च प्रर्कीतितः।[6]

उसी प्रकार मैथिल ब्राह्मणों के भी पाँच भेद थे यथा योत्रिय, योज्ञ, पंजीबद्ध, जैबार तथा दोगमिया।

एक कान्यकुस्ज ब्राह्मण के पाँच उपविभाग थे। मिथिला में आकर निवास करने वाले ब्राह्मणों में सबसे प्राचीन गौतम कुल के ब्राह्मण थे। तत्पश्चात विदेह जनको के समय में अनेक ब्राह्मण कुरू पंचाल से मिथिला में आकर निवास करने तथा यहाँ के नगरिकता स्वीकार कर लेने के कारण वे सभी मैथिल ब्राह्मण के नाम से प्रसिद्ध हुए।[7]

मिथिला निवासी अनेक ब्राह्मणों द्वारा शुद्रों एवं अन्त्यजो का प्रतिग्रह स्वीकार करने के कारण निम्नकोटि में परिगर्णित हुए। जिन ब्राह्मणों ने मृतकों को श्राद्ध कर्म में अवसर पर मिल दान को अपनी जीविका का सहारा बनाया उसका स्थान भी ब्राह्मण समाज में निम्न था जो ब्राह्मण, गंगा किनारे कुश लेकर दान प्राप्त करते थे उनका भी समाज में कम सम्मान था। वे गंगातरिया कहलाते थे। श्राद्ध कर्म में दान लेने वाले ब्राह्मण महाग्राहाण अथवा कंटाह कहलाते थे।[8]

इस प्रकार मिथिला में अनेक कुल और उपजाति के ब्राह्मण रहते थे। मैथिल समाज में धार्मिक कट्टरता एवं रूढ़िवादिता अतिप्राचीन काल से विराजमान थी। देश की राजनीति ने बार–बार करवट ली। हिन्दु साम्राज्य का पतन हुआ। परिस्थितियाँ बदलती रही। मिथिला में भी अनेक राजनीतिक एवं समाजिक उथल पुथल हुई। परन्तु वहाँ की सामाजिक कट्टरता एवं रूदिवादिता में बहुत ही कम अन्तर दृष्टिगत होता है।[9]

मुख्यतः ब्राह्मणों के चार वर्ग किये गये थे (1) क्षत्रिय (2) योग्य (3) पंजीबद्ध (4) जैवार। क्षत्रिय वे थे कि जो सूर्योदय से सूर्यास्त तक अपना समय पूजा पाठ अग्निहोत्र इत्यादि पवित्र काम में व्यतीत करते थे। वैवाहिक संबंध स्थापित करने के लिए क्रमशः ऐसी व्यवस्था की गयी थी। एक वर्ग के साथ दूसरे वर्ग के संबंध के लिए नियम बनाये गये जिनका पालन कड़ाई के साथ होता था। मिथिला में राजा हरि सिंह देव के समय मे पंजीकारों की नियुक्ति हुई थी जिनका काम मैथिल ब्राह्मण परिवारों के विषय में विस्तृत वंशावली को रखना था ताकि विवाह आदि के समय में रक्तवंश की सही जानकारी हो सके। वह प्रथा आगे चलकर भी मैथिल समाज में बनी ही रही। पंजी प्रबंध में ब्राह्मणों और कायस्थों की वंशावलियों में आने वाली संतानों के नाम तथा उनके संबध अंकित किए जाने लगे। पंजीकारों मे किसी प्रस्तावित वैवाहिक संबंध को जाँच कर उसे शास्त्रानुकुल घोषित करके उनके विषय में प्रमाण पत्र देने का पूरा अधिकार दिया गया। ब्राह्मणों के बाद राजपूत जाति का नाम आता है जिन्होंने अपने शौर्य पराक्रम एवं प्रभुता से पूरे मिथिला के साम्राज्य को प्रभावित किया। ये क्षत्रियों के वंशधर थे। वंश परम्परा के अनुसार इनकी चार श्रेणियाँ थी (1) सूर्यवंशी (2) चन्द्रवंशी (3) अग्निवंशी तथा (4) गोवंश/राजपूतों का काम कृषि पशुपालन के अलावा प्रदेश की रक्षा करना भी था। उनकी गिनती वीर जातियों में होती थी।[10]

राजपूतों के बाद वैश्यों का स्थान था जिनका मुख्य पेशा वाणिज्य व्यवसाय था। मिथिला के बुद्धिजीवी वर्ग में कायस्थ आते थे जो प्रदेश के प्रशासनिक कार्यों से लेकर अन्य महत्वपूर्ण कामों में भाग लेते थे। मिथिला में गाँव के पटवारी केरूप में विशेषकर इनकी नियुक्ति होती थी। मिथिला के प्रत्येक गाँव में एक पटवारी होता था जिसकाकाम गाँव के लेखापाल का भी था।[11]

कायस्थों का व्यवसाय मुख्यतः लिखने पढ़ाने का था। ब्राह्मणों की तरह कायस्थों में भी पंजीप्रथा का प्रारंभ हो चुका था। कायस्थ के भी दो वर्ग थे। एक कुलीन उच्चवंश में जन्म लेने वाले और दुसरा गृहस्थ अथवा साधारण कुल में जन्म लेने वाला। उनलागों को भी कायस्थ पंजीकारों से विवाह प्रमाण पत्र प्राप्त कर विवाह करना पड़ता था। ऐसी प्रथा सिर्फ ब्राह्मणों एवं कायस्थों में ही नहीं वरन् क्षत्रीय परिवारों में भी थी।[12]

उपरोक्त जातियों के अलावा मिथिला में और भी अनेक जातियाँ थी जिनका विभाजन उनके क्रमानुसार होता गया। कहार, शिविका ढ़ोने का काम करते तो कुम्हार बर्तन बनाने का। लोहार लोहे से कृषि के उपकरण बनाते थे। मल्लाह मछली पकड़ने का काम करते थे। इस प्रकार मिथिला में बरही, नोनिया, तेली, पासी, धोबी, चमार, दुसाध, मुशहर आदि जातियाँ थी जो विभिन्न पेशें में लगी हुई थी।[13]

मिथिला में स्त्रियों के कार्य एवं उनकी स्थिति विशेष रूप से अधीनस्थ की रही है। पुरूष प्रधान समाज होने के कारण कालान्तर में पुरूष की सेवा और जीवन के प्रत्येक चरा में उस पर निर्भर रहना ही क्रमशः उसके कार्य एवं स्थिति माना जाने लगा। वह पुत्री के रूप में अपने पिता के संरक्षण में पत्नी के रूप में अपने पति के संरक्षण में ओर विधवा के रूप में अपने पुत्र के संरक्षण में रहती थी। यदि वह पुत्र को जन्म देती तो परिवार और समाज में उसका आदर होता था। बाल–विवाह और बहुविवाह प्रथा प्रचलित थी। पर्दा प्रथा भी मिथिला क्षेत्र में विधमान था। स्त्रियों की बौद्धिक संस्कृति में वर्गानुसार भेद था। गाँव में जहाँ स्त्री ग्रामीण अर्थव्यवस्थाका अंग थी,साधारण अर्थ में सांस्कृतिक उत्थान की गुंजाइश नहीं थी।[14]

तत्कालीन मिथिला में यातायात के लिए विविध तरह के सवारियों का प्रयोग किया जाता था। यथा– हाथी, घोड़ा–गाड़ी, बैलगाड़ी, रथ, महाफा, शम्फनी, पालकी, नालकी, खड़खड़िया, डोलर, खटुसी, एक्का, तामदान, लचका, चौपाहा, मझौली तथा धोबियों के लिए गदहा।

मिथिला के लोग मनोरंजन के लिए अनेक साधनों का प्रयोग करते थे। जुआ, शतरंज, चौपड़, गजीफा, ताश, मोगल, पेढ़ान, सुइईयाकत्तर, कबड्डी, गोपीरोप, टांलगुल्ली, गेंद, चोरानुकी, चिल्हो–चुंत्ढी, सट्टा घट्टी, टेल्हा–टेल्हवी, सोनमा कंटीखा, शामा–चकवा आदि खेल प्रमुख थी। इनके अलावा तरह–तरह के वाद्य–यंत्रों से भी मिथिलावासी मनोरंजन करते थे।[15]

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

[1] जनरल ऑफ दि एशियाटिक सोसाईटी ऑफ बंगाल, सीरीज 1925, पृष्ठ 414.

[2] म॰ म॰ परमेश्वर झा, मिथिला तत्व विमर्श, पृष्ठ– 114.

[3] डा॰ राम प्रकाश शर्मा, मिथिला का इतिहास पृष्ठ सं॰ 550

[4] ibid.

[5] महाभारत

[6] स्कन्द पुराण अध्याय 17

[7] दशविश ब्राह्मण संहिता पृष्ठ– 39

[8] जे॰के॰ मिश्र, हिस्ट्री आफॅ मैथिली लिटरेचर, पृष्ठ– 78

[9] जनरल ऑफ दी बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाईटी, पृष्ठ सं॰ 516

[10] बिहार दि हार्ट ऑफ इण्डिया, पृष्ठ–104, जान हाउल्टन

[11] बिहार थ्रू दि एजेज, पृष्ठ सं॰ 694 आर॰आर॰ दिवाकर

[12] लिडिवस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया–Vol- 05, पार्ट 02 पृष्ट–4 गियर्सन

[13] बिहार दी हार्ट ऑफ इण्डिया, पृष्ठ सं॰– 30, जान हाउल्टन

[14] हिस्ट्री ऑफ मिथिला लिटरेचर, पृष्ट 30, जे॰के॰ मिश्र

[15] मिथिला दर्पण, रास बिहारी लाल दास, पृष्ठ संख्या– 142–143.